Saarth E-Journal of Research

ISSN NO: 2395-339X

महाश्वेता देवी की कहानियों में पर्यावरण चिंतन

रवीन्द्र एम. अमीन*

प्रकृति के तत्वों से निर्मित मनुष्य की अन्तिम परिणति प्रकृति में समाहित होने की है । सृष्टि के प्रारम्भ से मनुष्य पर्यावरण के बीच अपने आपको विकसित करने में लगा है । आदिम जन पर्यावरण प्रेमी था । पर्यावरण को सुरक्षित रखते हुए संतुलित रखे हुए अपने जीवन-निर्वाह की आवश्यकताओं को परिपूर्ण कर रहा था । लेकिन आधुनिक मानव अधिक से अधिक प्राप्त कर लेने की चाह में इतना स्वार्थान्ध हो गया है कि उसे दूसरे किसी का खयाल आता ही नहीं । विकास की अन्धी दौड़ में आधुनिक मनुष्य पर्यावरण का सन्तुलन बिगाड़ते हुए इतना आगे बढ़ गया है कि भविष्य के लिए अनेक संकट उपस्थित कर दिए हैं । वर्तमान भौतिकवादी युग ने प्रकृति का हद से अधिक दोहन कर जीवसृष्टि के लिए ख़तरे की घंटी बजा दी है । प्रकृति और मनुष्य अन्योन्याश्रित हैं यह भूलकर प्रकृति को महज़ उपभोग की वस्तु मान लेना अपने ही पैरों पर कुल्हाड़ी मारने जैसा है । आज समस्त विश्व पर्यावरण की बिगड़ती जा रही स्थिति से चिंतित है । पर्यावरण प्रेमी भयाक्रान्त हैं । अगर अभी भी ठोस कदम न उठाये गए तो भविष्य के लिए सृष्टि में जीवन संभव होगा या नहीं, यह एक प्रश्न है ! के. वनजा विश्व समुदाय में भारत की स्थिति से बहुत व्यथित है ! अपनी चिन्ता व्यक्त करते हुए लिखती हैं -

"आज विश्व की जनता के ऊपर आ गयी सबसे बड़ी विपत्ति है पर्यावरण का संकट । विकास के लिए प्रकृति के अतिदारुण दोहन-शोषण दुनिया भर हो रहे हैं । लेकिन जनसंख्या की वृद्धि जहाँ सबसे ज्यादा हो रही हैं वहाँ प्रकृति का यह शोषण ज़्यादा होगा ही। इसकी वजह यह है कि जनसंख्या और प्राकृतिक सम्पदा का अनुपात सही नहीं होगा। भारत जैसे देश में इस नज़रिए से पर्यावरण संकट बहुत भयानक रूप धारण कर रहा है ।"[1]

पर्यावरण का असन्तुलन संवेदनशील हृदयों को व्यग्र कर रहा है । साहित्यकार समाज का दृष्टा होने से पर्यावरण की असंतुलित स्थिति से आँख मूंद नहीं सकता । सजग रचनाकार अपनी-अपनी रचनाओं के ज़रिये पर्यावरण के प्रति चिन्ता व्यक्त करते रहे हैं । पर्यावरणप्रेमी भारतीय रचनाकारों में एक सशक्त नाम महाश्वेता देवी का भी है।

---

*रवीन्द्र एम. अमीन ,आसी. प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, आर्ट्स एण्ड कॉमर्स कॉलेज, देहगाम जिला :- गांधीनगर

Saarth
E-Journal of Research
ISSN NO: 2395-339X

वंचित-उपेक्षित-पीड़ित समुदायों के हितों की रक्षा के लिए आजीवन संघर्षशील रही महाश्वेता देवी मानवीय सरोकारों की पक्षधर हैं। आदिवासी शोषण की दर्दभरी कथा व्यक्त करते हुए महाश्वेता देवीजी पर्यावरण की स्थिति की ओर भी अपनी चिन्ता जताती रहती हैं । आदिवासी समुदाय का पर्यावरण से घनिष्ठ नाता है । विकास की वर्तमान दिशा में हो रहा प्रकृति का दोहन आदिवासी को कभी भी स्वीकार्य नहीं । के. वनजा का यह कथन शत प्रतिशत उचित है -

"आदिवासी जानते हैं कि सम्पूर्ण औद्ध्योगीकरण बड़े बाँध, कृषि की आधुनिक तकनीक, रासायनिक खादों के प्रयोगों के दूरगामी परिणाम हितकर नहीं हो सकते। दरअसल आदिवासी दूरगामी परिणामों को समझते हैं।......... वे मनुष्य और प्रकृति के सन्तुलन को समझते हैं, इसीलिए ऐसा नहीं चाहते कि एकतरफा विकास की अवधारणा को स्वीकार कर प्रकृति का सन्तुलन बिगाड़ दें। इसलिए वे पृथ्वी, वृक्ष, नदी का दुःख सुनते हैं।"[2]

महाश्वेता देवीजी दृढ़ता से कहती रही कि आधुनिक सभ्यता के विकास ने जंगल का - पर्यावरण का - विनाश कर दिया हैं । बीसवीं शताब्दी से जंगल अदृश्य होने लगे । रोड़, रेलवे, मेट्रो के नाम पर अंधाधुंध तरीके से पेड़ों की कटाई की जा रही हैं । वनशून्य धरती जीवन के लिए अभिशाप रूप है । 'शिकार' शीर्षक कहानी में महाश्वेताजी अतीत की स्मृति को दर्शाते अपनी मनोवेदना इन शब्दों में अभिव्यक्त करती हैं -

"एक दिन वन में जानवर थे, जीवन वन्य था, शिकार खेलने के अर्थ थे । अब वन शून्य है, जीवन का क्षय हो गया है और वह समाप्त हो गया है ।"[3] भारत में जो जंगल बाकी बचे हैं, वे केवल नाम के जंगल है । विकास के नाम पर वन्यसृष्टि का सर्वनाश कर दिया है । एक अन्य कहानी 'कुड़ोनी का बेटा' में कुड़ोनी के कथन के ज़रिये लेखिका की अन्तर्पीड़ा यूँ उजागर होती है - "आलू-तुंगा खोद निकालूँ, मारूँ कुदाल से चोट । वो दिन अब नहीं रहे । अब जंगल भी नहीं रहे । रहने भी नहीं देंगे । जिस प्रकार के वन में आलू-तुंगा हुआ करता है और वो शाल, पियाल, केंद, अर्जुन, सिघा, बहेड़ा, आँवला पेड़ों के जंगल अब रहे नहीं। फॉरेस्ट के बाबू, जंगल के ठेकेदार बाबू, सब मिलकर जंगल खतम कर रहे हैं और चिल्ला रहे हैं, गाँव के लोग जंगल काट रहे हैं ।

आजकल तो जंगल का अर्थ है- यूक्लिप्टस । जलावन, दातुन, पत्ता, फल, छाल, धूना कुछ नहीं देते । और जंगल की माटी को तो जैसे जला दिया है ।"[4]

भौतिकवादी यंत्रयुग ने वृक्ष की जगह चिमनी खड़ी कर दी हरियाले वन के स्थान पर फैक्टरियाँ और कांक्रीट के जंगल खड़े कर दिए हैं । आधुनिक तकनीकी साधनों के विकास से जीवसृष्टि पर विघातक परिणाम देखे गए हैं । चिड़िया, गीध आदि कई प्रजाति के

Saarth E-Journal of Research

ISSN NO: 2395-339X

पंछियों का अस्तित्व नामशेष हो रहा है । 1दिसम्बर, 2016 के गुजराती अख़बार 'गुजरात समाचार' में प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार गुजरात के कच्छ में ग्रेट इण्डियन बस्टर्ड की संख्या महज़ 20 ही रही है । समग्र भारत में इस प्रजाति के पक्षियों की संख्या सन् 2010 में 1260 के लगभग थीं, जो अब केवल 300 तक सीमित हो गई हैं । न केवल पक्षियों में बल्कि पशु-प्राणियों के लिए भी ख़तरे के निशान नज़र आ रहे हैं। जंगली प्राणियों का आये दिन मनुष्य बस्ती में चले आना बेवजह नहीं है । जंगल अब रहे नहीं और न ही खाने की पर्याप्त मात्रा ! फिर प्राणी अपने ठिकानों को छोड़ने बाध्य हो, यह सहज है । महाश्वेता देवीजी पूर्वी और दक्षिण-पूर्वी इलाकों के जंगल की बात करते हुए हाथियों की अवदशा और उनके विलुप्ति के कगार पर पहुँचने के दर्द को अक्सर अभिव्यक्त करती रही हैं । 'जगमोहन की मृत्यु' शीर्षक कहानी में अपनी व्यथा यूँ बयाँ करती हैं -

"पैकिडर्म - मोटी चमड़ी के पशु - आदिवासियों के ही समान लोप होने के मार्ग पर थे । किसी दिन वे भी झुंडों में अरण्य भारत में घूमते - फिरते थे, आज वे लुप्तप्राय हैं ।"[5]

महाश्वेता देवी ने 'अन्न, अरण्य, अन्न, अरण्य' कहानी में प्रकृति का मोहक चित्रण करते हुए गुजरें दिनों की स्मृति दिलाई है। लेखिका ने पूरा प्राकृतिक वातावरण चित्रित किया है । जैसे -

"उत्पल दिन भर यूक्लिप्टस के बीच रहता था । यही नौकरी थी । पर अपने घर में प्रातःकाल उठते ही पक्षियों का कलरव सुनता था । खिड़की के सामने खड़े होकर वह आम-जामुन (जंगली जाति के), शाल, महुल, केन्द, पियाल, अर्जुन आदि पेड़ों के पत्तों का हिल्लोल सुनता है । हवा में हरियाली की खुशबू मिलती थी । उस समय वह जोर-जोर से साँस लेता था । .... यहाँ पर उसने गोसाँप- सात प्रकार के साँप, इक्कीस प्रकार के पक्षी, बत्तीस प्रकार की तितलियाँ, नेवले-गिलहरी और बाघडाँसा देखा था ।"[6]

इस प्रकार के प्राकृतिक वातावरण में जीना नगरीय सभ्यता में अब स्वप्नवत् होता जा रहा है । अब तो बहार का पता भी केलेन्डर से चलता है । ऋतुओं का बोध नगरीय परिवेश में पल रही नयी पीढ़ी में कैसे पैदा किया जाये ? 'भारतवर्ष' नामक कहानी में जिन दिनों का वर्णन महाश्वेता जी करती हैं, उन दिनों को वर्तमान पीढ़ी क्या कभी जी पाएगी?

"माघ का महीना है । सुबह के ग्यारह बजे की धूप भी ठंडी है। आज इन दिनों गेहूँ-मड़वे के तुष से भरे बस्तों पर सोने के दिन हैं, आग तापने के दिन हैं, और जंगल में

Saarth E-Journal of Research

ISSN NO: 2395-339X

घूम-घूमकर बेर लाने के दिन हैं । बेर, आँवला, करौंदा, इस समय अरण्य दया से परिपूर्ण है।”[7]

स्वतन्त्रता के पश्चात् गांधीजी के स्वप्न के भारत का निर्माण मंसूबा ही बनकर रह गया । विकास की जिस पटरी पर देश सवार हुआ, उसमें लाभ से अधिक हानि है, इसे देश के नीति-निर्धारक नहीं समझ सके या तो जानबूझकर देश को गलत राह ले चले । भूमंडलीकरण की बदौलत पिछले दो-तीन दशकों से तो प्राकृतिक सम्पदाओं का दोहन करने में होड़ लग गई हैं । धरती के पट में रही सारी प्राकृतिक सम्पदा मनुष्य जितना हो सके शीघ्रातिशीघ्र निकाल लेना चाहता है । माइनिंग के ठेकेदारों ने पर्यावरण का बुरा हाल किया है । अधिकाधिक धनलिप्सा में भविष्य के बारे में सोचे बिना ज़मीन चीरते जा रहे हैं, खोखली करते जा रहे हैं । धनलिप्सा की इस होड़ में किसान को भी हरित क्रान्ति के नाम पर ला खड़ा कर दिया है । किसान भी अब अधिक पैदाइस के लिए ज़हरीली दवाइयाँ, रासायनिक खादों का प्रचुर प्रयोग कर पर्यावरण के नाश में सहभागी होकर अपने ही पैरों पर कुल्हाड़ी चला रहा है । देश के अनेक भागों में प्रत्येक खेत में ट्यूबवेल लग गए हैं । बड़ी-बड़ी कम्पनियाँ हज़ार - बारह सौ फ़ुट नीचे से सारा पानी सोख रही हैं । ‘भीष्म की प्यास’ नामक कहानी में पानी के अभाव का दृश्य रेखांकित किया गया है ।

“...... माटी के नीचे पानी था । ट्यूबवेल की डेढ़ सौ फीट पाइप डालने पर सबको पानी मिल रहा था । पर मंडलों ने एक के बाद एक कई बड़े-बड़े ट्यूबवेल लगवाकर सारा पानी खींच लिया है ।”[8]

न केवल पानी खींच लिया जा रहा है, बल्कि उससे भी अधिक ख़तरा तो कम्पनियों द्वारा छोड़े जा रहे प्रदूषित पानी से है। गंदा, ज़हरीला पानी खुले में या नदियों में बहाया जा रहा है । इस तरह पानी को प्रदूषित करने का षड्यंत्र भी देशभर में सरेआम चल रहा है । अगर स्थिति यही रही तो भविष्य की पीढ़ी को स्वच्छ जल कैसे उपलब्ध होगा यह गंभीर प्रश्न है ।

वाकई में समय का तकाज़ा है कि मनुष्य अपने निहित स्वार्थों से ऊपर उठे और आनेवाले कल के बारे में, भविष्य की जीवसृष्टि के बारे में सोचें । प्राकृतिक सम्पदा का समुचित प्रयोग करें, पर्यावरण को सन्तुलित बनाये रखने के कारगर उपाय करें, अन्यथा भविष्य अंधकारमय है यह सुनिश्चित है ।

Saarth
E-Journal of Research
ISSN NO: 2395-339X

सन्दर्भ सूची :

1. साहित्य का पारिस्थितिक दर्शन, वाणी प्रकाशन., प्र. सं. 2011, पृ. 100
2. हरित भाषावैज्ञानिक विमर्श, वाणी प्रकाशन, प्र. सं. 2015, पृ. 131
3. पचास कहानियाँ-महाश्वेता देवी, भाग-1, राधाकृष्ण प्रका., प्र. सं.2013, पृ.67
4. वही, पृ. 439
5. वही, पृ. 271
6. वही, भाग-2, राधाकृष्ण प्रकाशन., प्र. सं. 2013, पृ. 200
7. वही, पृ. 191
8. वही, भाग-1, पृ. 106